International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 10-09-2020; Accepted: 25-09-2020; Published: 11-10-2020
www.hindijournal.com
Volume 6; Issue 5; 2020; Page No. 84-85

हिंदी में बाल-नाटक की परंपरा

मनोज कुमार गुप्ता
शोधार्थी, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

प्रस्तावना

हिंदी बाल-साहित्य में बाल-नाटकों की एक लम्बी परंपरा रही है। "बाल नाटकों का यह सौभाग्य ही कहा जाएगा कि हिंदी साहित्य के एक से एक दिग्गज लेखकों ने बाल नाटक लिखे। एक ओर भारतेंदु हरिश्चंद्र, राजा लक्ष्मण सिंह, रामनरेश त्रिपाठी, रामधारी सिंह दिनकर, हरिकृष्ण प्रेमी, जगन्नाथ प्रसाद मिलिंद, डॉ. रामकुमार वर्मा, मन्मथनाथ गुप्त, विष्णु प्रभाकर, डॉ, लक्ष्मीनारायण लाल, प्रभाकर माचवे, नरेश मेहता और चन्द्रकिरण सोनरेक्सा ने बाल नाटक लिखे, तो दूसरी ओर केशवचंद्र वर्मा, आनंदप्रकाश जैन, मनोहर वर्मा, कमलेश्वर, श्रीकृष्ण, रेखा जैन, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, के.पी. सक्सेना, वेद राही, स्वदेश कुमार, सत्येन्द्र शरत, मंगल सक्सेना, केशव दुबे, पुष्पलता दीप, राधेश्याम प्रगल्भ, और कुदसिया जैदी के बाल नाटकों की खासी धूम रही। इनमें केशवचन्द्र वर्मा, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, कमलेश्वर और रेखा जैन का बाल नाटकों के क्षेत्र में किया गया काम युगांतकारी और ऐतिहासिक महत्त्व का है, जिससे आज भी बहुत कुछ सीखा जा सकता है।"1

सही मायने में बाल नाटकों की रचना आज़ादी के बाद ही शुरू हुई। केशव चन्द्र वर्मा की 'चाचा छक्कन के ड्रामे' (1957) और कुदसिया जैदी की 'बच्चों की कचहरी' (1956) शुरूआती दौर के चर्चित नाट्य-संग्रह रहे हैं। कुदसिया जैदी के नाट्य-संग्रह का शीर्षक और नाटक बेहद दिलचस्प और अलग तरह का है, जिसमें बच्चे अपनी कचहरी लगाते हैं। जब कचहरी बच्चों ने लगाई है तो जाहिर है इसके जज और वकील भी बच्चे ही होंगे। इस कचहरी में बच्चे उन सभी बड़ों को कटघरे में खड़ा करते हैं, जो उनकी मन की नहीं करते। यह नाटक हमें बाल-मन की उन बारीकियों से रू-ब-रू कराता जिस पर बड़े अक्सर गौर नहीं करते।

हिंदी के प्रसिद्ध कवि रघुवीर सहाय ने भी बच्चों के लिए कुछ रोचक नाटक लिखे हैं। जिनमें 'परियों के बच्चे', 'चुनमुन का मेमना', 'परी से भेंट', 'जब गुड़िया बोल उठी' आदि प्रमुख हैं। इन नाटकों की ख़ासियत यह है कि इसमें बीच-बीच में बेहद मजेदार गीतों का इस्तेमाल किया गया है। रघुवीर सहाय की तरह ही हिंदी के एक और प्रतिष्ठित कवि सर्वेश्वर दयाल सक्सेना ने भी कुछ बाल-नाटकों की रचना की है। ये कुछ उन चुनिन्दा बाल-साहित्यकारों में से एक हैं जिनकी रचनाएँ संख्या में भले ही कम हैं लेकिन असर के मामले में बेहद प्रभावी हैं। इनके नाटक 'भौं भौं-खोखो' और 'लाख की नाक' हिंदी बाल-नाट्य जगत में अपना एक विशेष स्थान रखते हैं। 'भौं भौं-खो खो' एक कुत्ते और बन्दर की कहानी को दिखाता है, जो एक मदारीवाले की कैद में हैं। मदारी इन दोनों को आपस में लड़ा कर अपना मतलब साधता है। नाटक के आखिरी अंक में सूत्रधार मदारीवाले की इस चाल का पर्दाफाश करता है "कान से कही गई हर बात लड़ाने की होती है चाल, कान पर करो न कभी यकीन आँख का देखा सच्चा हाल।"[2] इस बात को सुनने के बाद दोनों एकजुट होकर मदारी वाले के खिलाफ लड़ने की ठान लेते हैं। इस नाटक में कुत्ते और बन्दर की नोक झोंक के बहाने नाटककार ने दरअसल बचपन की रोजमर्रे की नोक झोंक को दिखाने की कोशिश की है, साथ ही एकजुट होने का सन्देश भी दिया है।

पिछले कुछ दशकों में बाल नाटकों में खासा बदलाव हुआ है। यह बदलाव शिल्प और कथ्य दोनों के लिहाज से हुए हैं।"उनमें अतिरिक्त गंभीरता को तोड़ता हुआ खिलंदड़पना आया है और बड़ी-से-बड़ी बातों को खेल-खेल में कहने का कौसल और अंदाज भी।"[3] इन नाटकों की ख़ासियत यह है कि इनके विषय बेहद समसामयिक हैं, साथ ही इनका मंचन भी बहुत आसान है। सीमित संसाधन में ही इन नाटकों का प्रभावी मंचन किया जा सकता है।

हाल के दिनों में बानो सरताज के दो नाटक 'टाकलम टोला घी का गोला' और 'चूं-चूं का मुरब्बा' चर्चा में रहें। दोनों नाटक हास्य पैदा करते हैं। इस तरह के नाटक बच्चों को खूब पसंद आते हैं। इन नाटकों का संवाद इतना आसान है कि बच्चे बहुत आसानी से इन्हें याद कर सकते हैं। वैसे तो इनका मंचन आसान है, लेकिन 'चूं-चूं का मुरब्बा' में ऑफिस का दृश्य बनाने में थोड़ी मुश्किल आ सकती है।

बीते कुछ सालों में प्रकाश मनु के कई बाल-नाटक सामने आये हैं। जिनमें हास्य नाटक की संख्या अधिक है। मसलन – 'हमारा नंदू जिंदाबाद', 'पप्पू बन गया दादा जी', 'जब मिशा ने ढूंढे रसगुल्ले', 'गरम-गरम इमरतिया', 'आफत में जान' आदि। ये सभी नाटक बच्चों द्वारा किये जाने वाले छोटी मोटी शरारतों पर आधारित हैं।

लोककथाओं को आधार बनाकर लिखे जाने वाले बाल-साहित्य अब कम नजर आते हैं।लेकिन बाल-नाटक में इस कमी को विभा देवसरे पूरा करती नज़र आ रही हैं। "वे नट-नटी की पुरानी लोक-परंपरा के बीच से नाटक की शुरुआत कराती हैं और बच्चों के मन को रिझा लेती हैं।"[4] इस दृष्टि से उनकी 'सबसे अमीर सबसे गरीब' एक महत्वपूर्ण रचना हैं।

'फलों के चौपाल'शीर्षक नाटक के जरिये अखिलेश श्रीवास्तव 'चमन' तमाम फलों की खासियतों को बेहद रोचक ढंग से बयां करते हैं। बच्चों को विभिन्न फलों के चित्रों वाले पोशाक पहनाकर इस नाटक का बहुत प्रभावी मंचन किया जा सकता है।

इनके अलावा पूरन सरना, ओमप्रकाश कश्यप, प्रताप सहगल, श्यामसुंदर सुमन आदि समकालीन हिंदी-बाल नाटक की दुनिया को समृद्ध बना रहे हैं।

निष्कर्ष

हिंदी बाल-साहित्य के साथ एक सबसे बड़ी दिक्कत यह है कि आज भी इसे हिंदी साहित्य की मुख्यधारा में शामिल नहीं किया जाता है। इसके साथ एक तरह से अछूत का व्यवहार किया जाता है। कुछ अपवादों को छोड़ दें तो बड़े लेखक आज भी बच्चों के लिए लिखने से कतराते हैं। दिलचस्प बात यह है कि हिंदी के पड़ोस में ही बांग्ला बोली जाती है। वहां ये हालात नहीं हैं। वहां तो बड़ा से बड़ा साहित्यकार भी बच्चों के लिए लिखता है। ये सिर्फ आज की बात नहीं है, यह बांग्ला-साहित्य की परंपरा रही है। जिसे रविन्द्रनाथ टैगोर से लेकर महाश्वेता देवी तक में देखा जा सकता। हमने हिंदी में इस तरह की परंपरा का विकास नहीं किया। यही वजह है कि आज भी हिंदी बाल-साहित्य दोयम दर्जे का साहित्य बना हुआ है।

हिंदी में बाल साहित्य को लेकर जो उपेक्षा भाव है, वह इसलिए भी है कि हिंदी पट्टी में 'बचपन' को लेकर जो संवेदनशीलता होनी चाहिए वो नहीं है। बच्चों की पसंद को विशेष तरजीह नहीं दी जाती। उपेक्षा का यही भाव साहित्य के साथ भी देखा जा सकता है। अभिभावकों का पूरा जोर बच्चों को विज्ञान और गणित जैसे विषयों में पारंगत करने में होता है। साहित्य उनकी इस वरीयता क्रम में सबसे निचले पायदान पर होता है। कई बच्चों को तो बाल साहित्य छुप-छुपकर पढ़ना पड़ता है। बच्चों और उनके साहित्य के प्रति बड़ों का यह रवैय्या बेहद चिंताजनक है।

सवा सौ साल से भी अधिक समय से लिखे जा रहे हिंदी बाल साहित्य का अभी तक व्यवस्थित इतिहास तक नहीं लिखा गया है। पुराने साहित्य का एक बड़ा हिस्सा नष्ट हो चुका है, उसे सहेजने की जरूरत तक नहीं समझी गई है।बाल-साहित्य की समीक्षा और उसके विमर्श को कोई विशेष तवज्जो नहीं दी जाती। समीक्षा को गंभीरता से न लेने की वजह से कई बार साधारण किताबों की खूब चर्चा हो जाती है और अच्छे बाल साहित्य का नोटिस तक नहीं लिया जाता। समीक्षा की स्वस्थ परम्परा साहित्य को चर्चा के केंद्र में लाती है, उसके गुण और दोषों पर बात करती है, जिसका लाभ आने वाली रचनाओं को मिलता है। समीक्षा की इस परंपरा से हिंदी का बाल साहित्य अब भी महरूम है। अब जरूरत इस बात की है कि न सिर्फ हिंदी बाल साहित्य का व्यवस्थित इतिहास लिखा जाए बल्कि हिंदी बाल साहित्य के समकालीन लेखन पर गौर किया जाए और इसके भीतर चल रहे विमर्शों को साहित्य की मुख्यधारा से जोड़ा जाए।

वर्तमान में, हिंदी में जो बाल साहित्य लिखा जा रहा है, वह हिंदी पट्टी के बच्चों की जनसंख्या के लिहाज से बेहद कम है। "रचनाओं की कमी तो है ही, जो है वह हर जगह उपलब्ध नहीं है। प्रशासनिक स्तर पर कई प्रयास हुए। जैसे मध्य प्रदेश सरकार ने अस्सी के दशक के आखिरी वर्षों में 'ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड' के तहत कदम उठाये थे कि हर सरकारी स्कूल में कहानी, कविताओं की किताबें पहुंचे।"5 कुछ साल तक तो यह मुहिम बहुत उत्साहजनक तरीके से चली। लेकिन आगे चलकर अधिकांश सरकारी स्कीमों की तरह यह भी ठन्डे बस्ते में चला गया।

हिंदी साहित्य ने वक्त के साथ-साथ जिस तरह अपना विस्तार किया और तमाम विमर्शों में न केवल शामिल रहा, बल्कि उन्हें एक दिशा देने का भी काम किया। हिंदी बाल-साहित्य में भी इस तरह के विस्तार की जरूरत है। हिंदी बाल साहित्य का एक बड़ा हिस्सा शहरी मध्यवर्ग के बच्चों की ज़िंदगी के इर्द-गिर्द रचा गया है। इस दायरे के बाहर के बच्चों की जिंदगी अभी भी हिंदी बाल-साहित्य में पूरी तरह नहीं आ पाई है। आज न केवल शहरी बल्कि कस्बाई, ग्रामीण और आदिवासी इलाकों के बच्चों की संवेदनाओं को स्वर देने की जरूरत है।

इन चुनौतियों के बावजूद समकालीन हिंदी बाल-साहित्य का संसार बेहद विस्तृत और समृद्ध है। रचनाएं विविधता लिए हुए हैं। इनके प्रकाशन की व्यवस्था भी पहले से बेहतर हुई है। 'राजकमल', 'वाणी', और 'राजपाल, जैसे हिंदी के बड़े प्रकाशक भी बाल-साहित्य के प्रकाशन में दिलचस्पी दिखाने लगेहैं। विनोद कुमार शुक्ल, राजेश जोशी, लाल्टू, गुलज़ार आदि जैसे प्रतिष्ठित साहित्यकारों का बाल-साहित्य से जुड़ना, समकालीन हिंदी बाल-साहित्य के संभावनाओं का विस्तार करता है। नये लेखकों का आना, चकमक जैसी पत्रिका का निकालना, बाल-मन के अनुरूप रचनाओं का प्रकाशन जैसी कई बाते हैं जो इस दौर के बाल-साहित्य के प्रति हमें आशान्वित करती हैं।

संदर्भ सूची

1. प्रकाश मनु, हिंदी बाल-नाटक के सौ वर्ष,बच्चे और किताबें, सं. हिमांशु पांड्या, रोहित धनकर, विश्वंभर, ग्रंथ शिल्पी, 2013, दिल्ली, पृ.68
2. सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, भों भों-खों खों, सं. प्रकाश मनु, साहित्य अमृत, (बालसाहित्य विशेषांक), नवम्बर-2012, पृ.136
3. प्रकाश मनु, हिंदी बाल-नाटकों की विकास यात्रा : एक पाठक के नोट्स, सं. अनुज,कथा (बालसाहित्य आलोचना विशेषांक), विकास कंप्यूटर एंड प्रिंटर्स, 2014, सहादरा, दिल्ली,पृ.92
4. प्रकाश मनु, हिंदी बाल-नाटक के सौ वर्ष,बच्चे और किताबें, सं. हिमांशु पांड्या, रोहित धनकर, विश्वंभर, ग्रंथ शिल्पी, 2013, दिल्ली, पृ.81
5. लाल्टू, बच्चों के लिए लेखन पर कुछ चिंताएं,सं. अनुज,कथा (बालसाहित्य आलोचना विशेषांक), विकास कंप्यूटर एंड प्रिंटर्स, 2014, दिल्ली,पृ.256